मनोविज्ञान का शिखर स्तंभ : पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र'

हिंदी साहित्य के धूमकेतु कहे जाने वाले पांडे बेचन शर्मा उग्र का हिंदी कथा साहित्य में पदार्पण किसी उल्कापिंड से कम नहीं है जिसने अपनी चमक से समस्त हिंदी साहित्य को ना केवल चमत्कृत किया अपितु समाज को उसकी वास्तविकता का दिग्दर्शन भी करवाया। अपनी तीक्ष्ण मर्म भेदी दृष्टि व यथार्थ जीवन अनुभव के कारण इन्होंने तब युगीन समाज की प्रत्येक व्यवस्था व विषमता को बहुत करीब से देखा जिससे इनके मन में उस समाज के प्रति खिन्नता वरोश भर गया तभी से उग्र ने यह मन बना लिया कि अपनी लेखनी रूपी शमशीर से समाज के समस्त विषमताओं को समूल नष्ट कर देंगे अपने इसी विरोधी स्वभाव के कारण उग्र को अपने व्यक्तिगत एवं साहित्यिक जीवन में समाज एवं आलोचकों की भर्त्सना का शिकार होना पड़ा। किंतु इन सब परिवेशों को नजरअंदाज करते हुए इन्होंने समाज को विकास के नवीन पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रेरित किया।

यथार्थ के चितेरे एवं तपस्वी साहित्यकार पांडे बेचन शर्मा उग्र का जन्म विक्रमी संवत 1957 की पौष शुक्ल अष्टमी को रात्रि के साढ़े अ बजे उत्तर प्रदेश के मिर्जापुर जिले में स्थित चुनार नामक से ऐतिहासिक उपनगरी के सद्दूपुर कस्बे में हुआ।। इनके पिताश्री बैजनाथ पांडे कौशिक गोत्र उत्पन्न सरयूपारीण ब्राह्मण थे। उनकी आजीविका पुरोहित और पूजा पाठ से चलती थी। उधर के पिता ने आजीवन एक स्थानीय सेठ के मंदिर में पाँच मासिक वेतन पर पूजा की परंतु अपना वेतन कभी नहीं लिया। उग्र के पिता न केवल पुरोहित ही थे अपितु वे बहुत तेजस्वी व सतोगुण ब्राह्मण भी थे। इनकी माता जयकली परम उग्र एवं कराल क्षत्राणी स्वभाव की थी। वह अपने क्रोधी स्वभाव के साथ साथ अपनी सभ्यता अपनी संस्कृति के प्रति भी उतनी ही जागरूक तथा सतर्क थी जितनी बे अपने परिवार के भरण पोषण के प्रति। उग्र के स्वभाव एवं साहित्य में जो उग्रता परिलक्षित होती है वह संभवत उन्हें अपनी माता से ही संस्कार एवं विरासत रूप में प्राप्त हुई थी। जीवन के अनेक अच्छे बुरे अनुभवों के साथ बालक उग्र ने लेखन के क्षेत्र में पदार्पण किया और यथार्थ के स्वरूप को कलम से बांधते हुए नए प्रतिमानों की स्थापना की तथा इसी से तत्कालीन समय में लोगों में एक नई चेतना का संचार कर उनकी सोई हुई मना स्थिति में नए प्राण फूंके। अपनी साहित्यिक प्रतिभा के बल पर पांडे बेचन शर्मा उग्र ने समकालीन युगबोध वह जीव जगत के यथार्थ स्वरूप को अपने साहित्य में यथावत स्थान दिया स्व कालिक समस्याओं को पूर्ण गहराई के साथ समझा और उसमें स्वयं को मिलाकर विराट मानवीय चेतना को कुशलता के साथ चित्रित किया। हिंदी कथा साहित्य इसके लिए उनका सदैव ऋणी रहेगा एवं उनका यह योगदान कथा साहित्य में अविस्मरणीय रहेगा। पांडे बेचन शर्मा उग्र विशुद्ध साहित्यजीवी थे और साहित्य के लिए ही जीते रहे। सन 1967 में दिल्ली में इनका देहावसान हो गया।

'मनोविज्ञान' अर्थात् मन का विज्ञान । अतः वह शास्त्र या विज्ञान जिसके द्वारा मानव मन के विविध कार्य-व्यवहारों, क्रियाकलापों उसके चारों ओर के वातावरण एवं आचरण का अध्ययन किया जाता है, वह वह मनोविज्ञान कहलाता है । रामचन्द्र वर्मा के मानक हिन्दी कोश के अनुसार, "वह विज्ञान या शास्त्र जिसमें मनुष्य के मन उसकी विभिन्न अवस्थाओं तथा क्रियाओं, उस पर पड़ने वाले प्रभावों आदि का अध्ययन तथा विवेचन होता है ।" [1] कहने का भाव है कि जिस शास्त्र में व्यक्ति के मानसिक व्यवहार का बोध हो, वह मनोविज्ञान कहलाता है । **समाज में रहते हुए व्यक्ति को अपने चारों ओर के में अनेक उत्तेजक तत्व मिलते हैं और इन्हीं तत्वों के अनुसार व्यक्ति सामाजिक प्रतिक्रिया को कार्य रूप देता है अतः जब कोई वस्तु देखता है कोई आवाज सुनता है किसी वस्तु का स्पर्श करता है तो उसके विषय में विचार करता है व्यक्ति का यही विचार करना या उन कारणों की खोज के बारे में सोचना जिनसे घटना घटित हुई है उसकी मन स्थिति कहलाती है अर्थात मनोविज्ञान में किसी भी वस्तु विश्वास ज्ञान रीति रिवाज आदि के उद्गम स्रोत की खोज की जाती है इस प्रकार कहा जा सकता है की मानव का आचरण शारीरिक प्रतिक्रियाएं मानसिक क्रियाएं वातावरण से मिलने वाले उत्तेजक तत्वों तत्वों संबंधी प्रतिक्रियाओं का अध्ययन ही मन का विज्ञान कहलाता है। उग्र का साहित्य विभिन्न सामाजिक आयामों से परिपूर्ण है। उनकी साहित्यिक तपस्या की झलक उनके साहित्य में स्पष्टता से झलक जाती है। उन्होंने उन परिस्थितियों को साहित्य का विषय बनाया जिनको वह स्वयं करीब से देख एवं झेल चुके थे। इतना ही नहीं इन्होंने व्यक्ति जीवन में घटित विभिन्न परिस्थितियों मानसिक संघर्षों जीव जगत व स्त्री पुरुष संबंधों को भी विषय बनाकर साहित्य को नए आयाम प्रदान की। उग्र ने आधुनिक युग बोध के यथार्थ को व्यापक धरातल पर उतार कर सामाजिक संदर्भों को चित्रित किया है।**

साहित्य मानवी जीवन की अभिव्यक्ति और उनके भावों एवं विचारों का मूर्त रूप है । मनोविज्ञान भी मानव जीवन का पर्यवेक्षण करता हुआ तत्सम्बन्धी भावों एवं विचारों को स्पष्ट करता है । तात्पर्य यह है कि साहित्य मानव जीवन एवं उसके जीवन के भावों एवं विचारों को स्पष्ट करता है । मनोविज्ञान भी उस जीवन के अनुभव और प्रवृत्तियों का अध्ययन प्रस्तुत करता है । साहित्य में मनोविज्ञान का प्रयोग विविध रूपों एवं प्रभुत

मात्रा में दृष्टिगोचर होता है । आधुनिक साहित्यकार की दृष्टि स्थूल वर्णन की अपेक्षा सूक्ष्म अन्तर्द्वन्द्व अथवा मनोविश्लेषण की ओर अधिक रहती है । मनोविश्लेषण मनोविज्ञान का ही एक अंग माना जाता है और आधुनिक युग में उसका मनोविज्ञान के रूप में प्रचलन हो रहा है ।

मनोविज्ञान ने साहित्य के विकास में काफी सहयोग दिया । भारतीय साहित्य में अब तक कल्पना को जो स्थान मिला था, वह बौधिक पक्ष को नहीं मिला था । पाश्चात्य शिक्षा ने हमारी साहित्यिक मान्यताओं में बहुत कुछ परिवर्तन कर दिया है, जिसके फलस्वरूप साहित्य में मनोविश्लेषण की परम्परा का प्रारम्भ हुआ है । वर्तमान साहित्य एवं साहित्यकारों की दृष्टि स्थूल की अपेक्षा सूक्ष्म वर्णन पर अधिक रही है, जिससे साहित्य को नई ऊँचाइयाँ मिली ।

साहित्य एवं मनोविज्ञान में घनिष्ठ सम्बन्ध है। **साहित्य मन का साथी है और मन साहित्य का उद्‌गम स्थान । मन** की **सहायता के बिना साहित्य सृजन के बारे में सोचा भी नहीं जा सकता** । दोनों एक दूसरे के विकास में सहायक होते हैं । इसी कारण साहित्य में मनोविज्ञान का प्रयोग अधिकाधिक होता है और साहित्यकारों पर भी इसका प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है । फ्रॉयड को मनोविज्ञान का पिता कहा जाता है । उनके अनुसार मनुष्य मस्तिष्क के तीन स्तर हैं - अवचेतन, अर्द्धचेतन और चेतन । सम्पूर्ण मस्तिष्क का तीन चौथाई भाग अवचेतन के हिस्से में है । मनुष्य के विचार तथा रहन-सहन के ढंग की स्वभाविकता तथा अस्वभाविकता का मूल प्रेरक भी यही अवचेतन है । हमारे व्यक्तित्व का विकास अवचेतन मन पर ही आधारित है । चेतन मस्तिष्क की गतिविधियों को अवचेतन मस्तिष्क परिचालित करता है । अर्द्धचेतन इन दोनों के मध्यवर्ती स्तर का है । इस तरह फ्रायड के अनुसार अवचेतन मन को जानना ही मनोविज्ञान है । साहित्यकारों पर भी फ्रॉयड के इसी मनोविज्ञान का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है, जिससे साहित्य को एक नवीन दिशा मिली है । साहित्य व मनोविज्ञान, मनोभावों, मनोविकारों मनानुभूतियों की व्याख्या प्रस्तुत करता है, तो साहित्य उस व्याख्या को सहज, सरल, स्वाभाविक बनाने में सहायक सिद्ध होता है ।" [2] कहने का भाव है कि दोनों का सम्बन्ध सिक्के के दो पहलुओं की तरह मानव मन से है, जो दोनों को आपस में जोड़ता है । मनोदशा का अर्थ है - मानव मन की स्थिति, अवस्था एवं विचार । बचपन से ही व्यक्ति के मन में इच्छाएँ एवं आकांक्षाएँ पैदा हो जाती हैं । इनकी पूर्ति के विषय में व्यक्ति जब विचार करता है तब उसके मन की वही स्थिति या दशा मनोदशा कहलाती है । मानक हिन्दी कोश में मनोदशा का अर्थ इस प्रकार से स्पष्ट किया गया है, "स्त्री (सं0 मनोदशा + टाप) किसी कार्य या विषय के प्रति होने वाले राग विराग या प्रवृत्ति-विरति आदि के विचार से समय विशेष पर होने वाली मन की अवस्था या दशा । (मूड) ।" [3] व्यक्ति जब किसी कार्य विशेष एवं उसकी प्रकृति के बारे में विचार करता है, वही उसकी मनोदशा कहलाती है । हिन्दी शब्दकोश के अनुसार मनोदशा का अर्थ है, "सं0 (स्त्री0) मन की प्रवृत्ति ।" [4] अतः व्यक्ति के सोचने एवं विचारने की प्रक्रिया मनोदशा कहलाती है । व्यक्ति अपने जीवन में अपनी इच्छाओं एवं आकांक्षाओं को दृष्टि के समक्ष रखकर ही अपने लक्ष्य का निर्धारण करता है । इसी लक्ष्य की आपूर्ति के कारण व्यक्ति को असफलताओं का दिग्दर्शन भी करना पड़ता है, जिसमें कामवृत्ति, अहम, जिज्ञासा मानसिक द्वन्द्व, आक्रोश, विद्रोह, स्वप्न, घुटन, कुण्ठा, निराशा, विवशता, घृणा, भय, हीनता मनोदशाएँ उत्पन्न होती हैं । पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने अपने कथा साहित्य में मनोदशाओं के इन रूपों को चित्रित किया है ।

काम प्राणी मात्र की जन्मजात मूल प्रेरक तत्व के रूप में उसके भीतर विद्यमान रहती है । वास्तव में प्रत्येक व्यक्ति की प्रत्येक कामना के मूल में यही काम भाव आनन्द रूप में समाहित रहता है । मूलतः काम सर्वाधिक व्यापक, प्राणी मात्र के समस्त कार्य कलापों का उत्प्रेरक जीवन का सहज व भौतिक भाव है । वर्तमान समय का यह काम दर्शन आर्थिक विकास और समाज के नवनिर्माण की भूमि से उत्पन्न हुआ । पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने अपनी रचनाओं में व्यक्ति की कामवृत्ति को चित्रित किया है । इन्होंने काम के विविध पहलुओं को अभिव्यक्ति दी है । यह कामवृत्ति, स्पर्श, दृश्य तथा चुम्बन के रूप में सामने आई है । चुंबन कामवृत्ति को तृप्त करने का सशक्त माध्यम है । इसके द्वारा व्यक्ति कामवृत्ति की परिणति करता है । 'फागुन के दिन चार' उपन्यास की नायिका मिस रोज जब जवानी की दहलीज पर कदम रखती है तो उसकी सुन्दरता शहर के कई दिलफेंक आवारों की नज़र पर रहती है । वह उसे छूने और चूमने का अवसर ढूँढते है, जिससे वह अपनी कामवृत्ति को तृप्त चाहते हैं । उनके शब्दों में, "कैसी जालिम... ! - कैसी कमसिन ! क्या नाम ? कहाँ रहती है ? - एक दिन चरस के नशे में चकाचक चूमने को जी चाहता ।" [5] चुम्बन से व्यक्ति अपनी काम भावना की तृप्ति करता है, जिससे उसके मानसिक भटकाव को लगाम मिल जाती है । इसी तरह लेखक ने 'मनुष्यानन्द' उपन्यास में पात्र घनश्याम नायिका राधा के प्रति आकर्षित होकर उसका आलिंगन करके उसे चूम कर अपनी कामवृत्ति को शान्त करना चाहता है । उसके शब्दों में, "प्रिये ! क्षमा करना, मैं इस कुञ्ज में तम्हें चूमना चाहता हूँ, वैसे ही जैसे प्रकाश इस हरे भरे वातावरण को, मधुकर इन चन्द्रिका धवल मालतियों को चूम रहे हैं ।" [6] इस प्रकार कहा जा सकता है कि चुम्बन से व्यक्ति अपनी कामवृत्ति की तृप्ति करता है । व्यक्ति द्वारा विषमलिंगी को चूमना कामवृत्ति को शान्त करने का माध्यम है । व्यक्ति की मानसिक सकारात्मकता एवं साहस भी उसे अहमवादी बना देता है । 'कढ़ी में कोयला' उपन्यास की नारी पात्र प्रियंवदा के माध्यम से अहम् भाव को अभिव्यक्ति मिली है । सभा को सम्बोधित करते हुए वह पुरुष वर्ग की अकर्मणीयता दर्शाते हुए समाज के विकास की बागडोर को महिला वर्ग के हाथों में देने का आह्‌वान करती है । उसके शब्दों में, "मैं कह चुकी हूँ और फिर भी कहती हूँ न्याय - भरे - दावे से कलकत्ता पुरुषों का नहीं महिलाओं का है । पुरुष बहुत दिनों तक मूसलों ढोल बजा चुके, पोल अपनी दिखा चुके । अब वे हटें, माता काली के कलकत्ते का सूत्र संचालन माताओं को करने दें । मैं कहती हूँ एक ही वर्ष में हम कलकत्ते से वेश्यालय, मदिरालय, जुआलय और तरह के कुकर्मालयों को बिलकुल बन्द कर नरक के अंधेरे में स्वर्ग की चाँदनी खिला देंगी ।" [7] अतः विकास का सूत्र संचालन पुरुष वर्ग के स्थान पर स्त्री वर्ग अधिक सुगमता एवं सही ढंग से कर सकता है क्योंकि नारी वर्ग कम से कम दुर्व्यसनों के वशीभूत होकर अपने अधिकारों का दुरूपयोग तो नहीं करता है ।

किसी भी नई एवं अद्‌भुत चीज को देखते ही मानव मन में उसके विषय में जानने की चाह सहज ही उत्पन्न हो जाती है । कुछ जानने की यही चाह जिज्ञासा कहलाती है । बचपन से ही व्यक्ति में यह प्रवृत्ति विद्यमान होती है, जो उम्र के साथ-साथ बढ़ती जाती है । समाज में रहने वाला प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन में सुख-सुविधाओं एवं समृद्धि के विकास के लिए अपनी इस प्रवृत्ति को पूर्ण करना चाहता है । पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' ने अपने कथा साहित्य में मानव मन के जिज्ञासा भाव को सहजता से चित्रित किया है ।'शराबी' उपन्यास में पात्र तमोली के माध्यम से लेखक ने जिज्ञासा भाव को अभिव्यक्त किया है । उपन्यास में जब जवाहर के घर खून हो जाता है तो तमोली के मन में अनेक प्रश्न एक साथ उपजते हैं । उसका मन कौन मरा, किसने मारा तथा किस कारण से मारा आदि जिज्ञासाओं से घिर जाता है । उसके शब्दों में, "कौन-कौन मारा गया ? किसने मारा ? क्यों मारा ? - आश्चर्य से बिना सुपारी के ही पान लपेटते हुए, तमोली ने संवादवाहकों से पूछा - उसका कोई यार था ।" [8] अतः तमोली अपने मन के प्रश्नों का हल जानने के लिए अपनी दुकान पर आने वाले हर व्यक्ति पर इन प्रश्नों की बरसात कर देता तथा यह जानने का प्रयास करता है की खून होने का सही कारण क्या है ?'मों को चुनरी की साध' कहानी की नायिका तुलसा के बाल सुलभ मन

में विवाद के बारे में जानने की जिज्ञासा उत्पन्न होती है । सुहागरात के पहले ही विधवा हो जाने पर जब सारा परिवार शोकाकुल हो जाता है तब भी तुलसा अपनी माँ से यही पूछती है कि माँ क्या विवाह में रोया भी जाता है । उसके शब्दों में, "क्या हुआ, माँ ! तुम रोती क्यों हो ? क्या ब्याह में रोया भी जाता है ।" [9] उद्धरण से प्रतीत होता है कि तुलसा यह जानने की इच्छुक है कि विवाह में खुशी के अवसर पर क्यों रोया जाता है । क्या यह कोई विवाह का संस्कार है । आक्रोश एक मानसिक दशा है । व्यक्ति द्वारा इसकी अभिव्यक्ति न होने पर उसमें यह आत्मपीड़न या असीम दैन्य के रूप में देखी जा सकती है । वास्तव में आक्रोश कोई स्वतन्त्र मूल वृत्ति नहीं है । 'गंगामाता' उपन्यास का पात्र धनीराम अपनी निर्धनता से विवश होकर मन्दिर के चांदी चुराने जाता है तो मन्दिर में उपस्थित एक व्यक्ति उसे पकड़ते हुए आक्रोशित स्वर में कहता है, "चोर ! उचक्के ! हरामज़ादे ! - मन्दिर में भी कुकर्म करने की हिम्मत तुझे हुई कैसे ? पापी ! नीच !" [10] अतः धनीराम की विवशता को बिना सुने, समझें वह व्यक्ति आवेश में आकर उसे बुरा भला कह देता है, जिससे उसके आक्रोश के स्पष्ट दर्शन होते हैं । इसी तरह 'ब्राह्मण द्रोही' कहानी का पात्र कमलनाथ एक ब्राह्मण होकर ब्राह्मणत्व को सर्वश्रेष्ठ कहता है, किन्तु उसका लड़का यह मानने से इन्कार कर देता है । तब वह उसे क्रोधित होकर कहता है, "निकल जा मेरे घर से ! मूर्ख, पतित, चाण्डाल ! तेरे जैसे ब्राह्मण द्रोही का मुख देखना भी पाप है ।" [11] अतः कमलनाथ अपने झूठे विश्वास एवं खण्डित होते पुरातन विचारों से परेशान होकर अपने पुत्र को घर से निकाल देता है ।

किसी व्यक्ति या व्यक्ति समूह के द्वारा किसी सत्ता, व्यवस्था, परम्परा रूढ़ि, जीर्ण-शीर्ण रिवाजों को अस्वीकार और उसे समाप्त करने का प्रयत्न करना विद्रोह कहलाता है । नहीं दे सकते । आग लगे इस समाज में ! वज्र पड़े ऐसे रिवाज़ पर ! मैं अपनी रानी की साध पूरी करूँगी । उसे चुनरी दूँगी ।" [12] कहने का भाव है कि समाज के जो नियम व्यक्ति के विकास के लिए बने हैं, वही यदि उसके विकास में बाधा उत्पन्न करें तो व्यक्ति को उनके विरुद्ध विद्रोह का मार्ग अपनाना पड़ता है । यही कार्य तुलसा की माँ कहानी में कहती है ।

इसी तरह से स्वप्न मनुष्य के अचेतन मस्तिष्क में कुण्ठाओं की अभिव्यक्ति का माध्यम है, जिसके माध्यम से मानव अपनी विशेष रूप से दमित काम वासना की पूर्ति करता है ।" [13] अतः व्यक्ति के अचेतन मन की इच्छाएँ ही स्वप्न में साकार होती हैं । वैसे तो व्यक्ति में बहुत सी इच्छाओं का संग्रह होता है; किन्तु इच्छाएँ ऐसी होती हैं, जिन्हें व्यक्ति सामाजिक एवं नैतिक नियमों के कारण अभिव्यक्त नहीं कर सकता । ऐसी इच्छाएँ सरल एवं सुगम मार्ग को छोड़कर अन्य मार्गों का सहारा लेती हैं । इन मार्गों में स्वप्न स्वाभाविक मार्ग है ।'गंगा, गंगदत और गांगी' कहानी का पात्र गंगदत को पता लगता है कि वरदानी रथ पर सवार होकर बूढ़ी वेश्या फिर जवान हो गई है तो उसका मन भोग-विलास की कामना से उछल पड़ता है । वह सोचता है, "वाह ! - वेश्या वह युवती...? मेरी पत्नी भी अगर महाराज के दर्शन कर ले, तो वह भी इस वेश्या सी नवेली - आह !" [14] गंगदत अपनी पत्नी के यौवन की बात सोच कर काम-वासना से सिहर उठता है । अतः व्यक्ति जिस घटना, वस्तु या व्यक्ति के बारे में सोचता या सुनता है । वही व्यक्ति के स्वप्न जगत को प्रभावित करती है

समाज में पराजय, अपमान एवं मानसिक दबाव के कारण भी व्यक्ति मन में घुटन व्याप्त हो जाती है । 'जीजीजी' उपन्यास की नायिका प्रभा पढ़-लिख कर भी जब अपने अधिकारों के लिए नहीं लड़ पाती है तो अपना जीवन व्यर्थ लगता है । उसके लिए स्त्री जीवन का कोई महत्त्व नहीं । उसका कहना है, "स्त्री तो पुरुष द्वारा समाप्त होने को बनी है - चाहे दो दिन में उसे गुण्डे खा जाएँ मिलकर, या दो साल में पति समाप्त कर दे अकेले । सिवा मरने के औरतों के लिए कसाई खाने की बकरी की तरह, कोई चारा नहीं।" [15] अतः प्रभा द्वारा दाम्पत्य सम्बन्धों में पराजय एवं पारिवारिक राजनीति में अपने अस्तित्व को खण्डित होते देखने के कारण उसका मन विक्षोभ से भर उठता है, किन्तु अपने संस्कारों के कारण वह घुट कर रह जाती है ।

समाज में रह कर पूर्ण शिक्षा ग्रहण करने के बाद भी जब व्यक्ति अपने अधिकारों से वंचित रह जाता है, तो उसका शारीरिक विकास के साथ साथ मानसिक विकास भी अवरूद्ध हो जाता है । परिणामस्वरूप व्यक्ति का जीवन कुण्ठित हो जाता है अर्थात् जीवन की असहजता कुण्ठा को जन्म देती है । सामान्य अर्थ में कहा जा सकता है कि जीवन में आने वाली रूकावट या अवरुद्धता ही कुण्ठा कहलाती है । व्यक्ति जब अपने अधिकारों का हनन होते देखता है या अपनी किसी इच्छा या कल्पना की आपूर्ति देखता है तो क्रोध से भर जाता है । यही क्रोध तनाव को जन्म देता है, जो व्यक्ति जीवन के सहज क्रम में अवरोध उत्पन्न करता है । यही असहजता व्यक्ति को उसके दैनिक कार्यों में अव्यवस्थित और अव्यवहारिक बना देती है । व्यक्ति का यही अव्यवहार या असमानता कुण्ठा को जन्म देते हैं ।'उग्र' के कथा साहित्य में कुण्ठा को भी अभिव्यक्ति मिली है । 'मनुष्यानन्द' उपन्यास में एक वृद्ध पात्र दूसरे से यही कहता है कि समाज में उनका क्या स्थान है । उसके शब्दों में, "नरक तो है ही भैया, - सारी जिन्दगी केवल मैला फैंक कर गुज़र करना पूरा नरक दण्ड है । सुबह शाम जब जब पैसे वाले अपने को 'ऊँच' लगाने वाले लोग ईश्वर चिन्तन और हवाखोरी की तैयारी करते हैं, उस वक्त हम क्या करते हैं ? या तो कूड़ा गाड़ी की गन्दी हवा से अपनी सांसों में ज़हर भरते हैं या पाखानों में झाड़ू देकर, अपने माथे पर मैले का मुकुट धारण कर पतितों के सरदार की तस्वीर बनते हैं । और इतना करने पर भी हम प्लेग या हैजा, खासीया बुखार से मरते रहें, कोई हमें पूछने वाला नहीं । कोई हमारी दवा-दारू की फिक्र करने वाला नहीं यह नरक-भोग नहीं तो और क्या है ?" [16] कहने का भाव है कि भंगी जीवन सुधार की अपेक्षा रखता है, किन्तु जब उनकी इस इच्छा को अनदेखा कर दिया जाता है तो उनका जीवन कुण्ठाग्रस्त हो जाता है ।

व्यक्ति अपनी इच्छाओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति का प्रयत्न करे और उसके मार्ग में आशा के विपरीत बाधायें उत्पन्न हो जायें तो निराशा की उत्पत्ति हो जाती है अर्थात् व्यक्ति में उत्साह की कमी ही निराशा है ।अथक प्रयास की विफलता व्यक्ति को नैराश्य से भर देती है, जिससे उसका जीवन दूभर हो जाता है । 'फागुन के दिन चार' उपन्यास में महादेवी जब जगरूप का विवाह करने के बाद उसे सही मार्ग पर लाने में विफल रहती है तो वह निराशापूर्ण शब्दों में जगरूप से कहती है, "चांडाल । पापी तुझे लाज नहीं आई । लक्ष्मी बहू को लात मार कर चुड़ैल के कोठे पर रात बिताने में ? मैं कह देती हूँ भैये । यह सब नहीं चलने का । मेरी जान ही लेना है मुझे तो एक ही बार गला घोंट कर मार डाल, न रहे बास न बजे बांसुरी । न देखूंगी, न झखूंगी ।" [17] कहने का भाव है कि महादेवी अपने गोद लिए पुत्र, जिसे वह अपना वारिस बनाने वाली थी को सही मार्गदर्शन न दे पाने से स्वयं को उसके बिगड़ते जीवन का जिम्मेदार समझ कर ग्लानि से भर जाती है ।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि व्यक्ति के शारीरिक एवं मानसिक विकास के कारण ही मनोदशाओं एवं यौनादि भावनाओं का जन्म एवं विकास होता है, जिसे उसकी मनः स्थिति कहा जाता है । अतः मानव मन में उठने वाले विभिन्न भाव ही मनोविज्ञान का विषय होते हैं । **मनोविज्ञानएक निश्चित विज्ञानहै जो प्राणियोंके शारीरिकए मानसिकतथा सामाजिक सभी प्रकार के व्यवहारों व्यवहारों का अध्ययन करता है। मनोविज्ञानका उद्देश्य मानव अथवा पशु.पक्षियोंके विभिन्नव्यवहारों के कारणों की खोज करके मानव अथवा पशु.पक्षी के के स्वभाव से भांति परिचितहोना है। क्योंकिप्राणी का बाह्य व्यवहार उसकी मानसिकस्थिति पर निर्भर करता है तथा यह बाह्य व्यवहार वास्तव में उसके अन्तर्मन की बाह्य अभिव्यक्तिमात्र है । इसलिएमनोविज्ञानप्राणी के अन्तर्मन का भी अध्ययन करता है।**

संदर्भ ग्रंथ सूचीरू.

1 रामचन्द्र वर्मा (सं0), मानक हिन्दी कोश, पृ0 293 ।
2 ममता शुक्ला, मन्नू भण्डारी के कथा साहित्य का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन, पृ0 49 ।
3 रामचन्द्र वर्मा (सं0), मानक हिन्दी कोश चौथा खण्ड, पृ0 292 ।
4 हरेदव बाहरी (सं0), हिन्दी शब्दकोश, पृ0 637 ।
5 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', फागुन के दिन चार, पृ0 53 ।
6 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', मनुष्यानन्द (बुधुआ की बेटी), पृ0 165 ।
7 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', कढ़ी में कोयला, पृ0 14 ।
8 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', शराबी ('उग्र' : श्रेष्ठ रचनाएँ-2), पृ0 251 ।
9 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', 'उग्र' : श्रेष्ठ रचनाएँ-1, पृ0 10 ।
10 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', गंगामाता ('उग्र' : श्रेष्ठ रचनाएँ-2), पृ0 456 ।
11 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', 'उग्र' : श्रेष्ठ रचनाएँ-1, पृ0 131 ।
12 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', 'उग्र' : श्रेष्ठ रचनाएँ-1, पृ0 11 ।
13 केदारनाथ, अज्ञेय के उपन्यास प्रकृति और प्रस्तुति, पृ0 51 ।
14 वही, पृ0 192 ।
15 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', जी जी जी, पृ0 44 ।
16 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', मनुष्यानन्द (बुधुआ की बेटी), पृ0 129 ।
17 पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र', फागुन के दिन चार, पृ0 82 ।